P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-11* July- 2019
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

कामायनी में जीवन सन्देश

जन्म–30 जनवरी 1890
मृत्यु–15 नवम्बर 1937

ज्योति मिश्रा
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग,
गंगाधरमेहेर विश्वविद्यालय
संबलपुर, ओड़िशा, भारत

सारांश

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो" अथवा "अखंड आनंद घना था" अथवा"यह विश्व नीड़ बन जाता" कहकर नारी की महत्ता और समरसता के सिद्धांत का नियोजन करने वाले प्रसाद हिंदी ही नहीं सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं के शिखर साहित्यकार थे। वे भारतीय संस्कृति के शिल्पकार थे। भारत के प्राचीन–गौरव गरिमा के सर्जक साहित्यकार थे। उन्होंने समरसता एवं मानवता का मार्ग प्रशस्त किया। भारतीय संस्कृति की आत्मा की स्थापना के लिए वे कटिबद्ध थे। उन्होंने प्रत्येक भारतीय के मन में यह भावना पैदा की कि संसार की किसी भी संस्कृति से हमारी संस्कृति उच्चतम है। 'कामायनी' में प्रसाद ने यह स्पष्ट किया है कि श्रद्धा रहित बुद्धिवाद संघर्ष, अत्याचार और विद्रोह को जन्म देता है, परन्तु श्रद्धा समन्वित होकर वह मानवता को वास्तविक सुख और शांति प्रदान करने की क्षमता रखता है। प्रसाद की दृष्टि आशावाद से आनंदवाद तक जाती है। 'कामायनी' वस्तुतः आनंदवाद का प्रतिरूप है।

मुख्य शब्द : कामायनी, जीवन सन्देश।

प्रस्तावना

श्री जयशंकर 'प्रसाद' संक्राति काल के कवि थे। संक्रांति काल के कवि को कार्य करने में विशेष कठिनाई होती है क्योंकि उसे एक ओर प्राचीनता की प्रतिष्ठा से संयमित रूप से विद्रोह करना पड़ता है तो दूसरी ओर नवीनता का नियंत्रित रूप अपनाना पड़ता है। ये दोनों कार्य बड़े कठिन हैं। इसलिए संक्रांति काल के कवि को अधिक परिश्रम और साधना करनी पड़ती है। साधारण कवि तो केवल परंपरा से चली आ रही नियमों का पालन मात्र करते हैं, उन्हें विरोध की या अपने ऊपर लगने वाले आरोपों की कोई चिंता नहीं होती। इसके विपरीत संक्रांति काल के कवि का मार्ग कंटकाकीर्ण होता है। उसकी स्थिति बड़ी नाजुक होती है, वह सदैव आरोपों के घेरे में होता है। ऐसी स्थिति में उसे बड़े कौशल से काम लेना होता है। वह अपनी प्रतिभा रूपी प्रकाश से मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करता है और अपना पथ प्रशस्त करता है। उसके लिए कोई प्राचीन आदर्श नहीं होता, उसे स्वयं ही सब कुछ करना होता है। वह युग निर्माता होता है। प्रसाद जी ऐसे ही कवि थे। उनके समय में हिंदी साहित्य में विचित्र उथल–पुथल थी। भारतेंदु युग का अंत हो चुका था। और द्विवेदी युग का आरम्भ होने वाला था। इस युग परिवर्तन के काल में काव्य के उपकरण, भाषा, भाव, छंद आदि को बदलने की चेष्टा अधिक हो रही थी। सबसे अधिक विवादास्पद प्रश्न काव्य भाषा का था। काव्य भाषा ब्रज भाषा का स्थान धीरे–धीरे खड़ी बोली लेने लगी। प्रसाद ऐसे संक्रांति काल के कवि थे। वे काशी में जन्मे थे अतः भारतेंदु युग के समस्त संस्कार उन्हें विरासत में मिले थे। भारतेंदु युग के अवशिष्ट संस्कार लेकर, द्विवेदी जी की इतिवृत्तात्मक कविता की छानबीन द्वारा उन्होंने छायावाद की कविता का सूक्ष्म रूप दिया जो निराला तथा पन्त के कर कमलों से सज्जित होकर अपनी अभिव्यंजना की व्यापकता के कारण प्रगतिवाद का आवाहन कर सका। प्रसाद ऐसे महान कवि थे। ग्यारह वर्ष की अवस्था में उन्हें अपनी माता जी के साथ धारा क्षेत्र, ओंकारेश्वर, पुष्कर, उज्जैन, जयपुर, ब्रज और अयोध्या आदि की यात्रा करने का अवसर मिला। बाद में उन्होंने पुरी महोदधि और भुवनेश्वर की भी यात्रा की। इस यात्रा में वे समुद्र की विशालता और गंभीरता से परिचित हुए और अमरकंटक की यात्रा में पर्वतीय दृढ़ता और उच्चता के संपर्क में। उनकी कविता में प्रकृति की इन विराट शक्तियों से प्रेरित भावनाओं के फलस्वरुप गंभीरता और विशालता दोनों मिलती है।

विश्व के सभी महाकाव्यों का निर्माण मानव जीवन के आधार पर होता है और वे दुर्बल, पतित एवं आपत्तिग्रस्त मानवता को सशक्त, उन्नत एवं आनंदमय बनाने के लिए लिखे जाते हैं। यही कारण है की प्रत्येक महाकाव्य में मानव–मात्र

के लिए जीवन–सन्देश अन्तर्निहित होता है और उस सन्देश द्वारा वे सम्पूर्ण विश्व का पथ प्रदर्शन करते हुए मानव जीवन को आनंदमय–कल्याणमाय बनाने का प्रयत्न करते हैं।

प्रसाद का अंतिम और श्रेष्ठ ग्रन्थ है कामायनी। हिंदी साहित्य में 'कामायनी' का सृजन भी आश्चर्यमयी घटना है। इसका कारण यह है की छायावादी युग मुक्तक का युग है। उसमें प्रबंध काव्य के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। 'साकेत', 'प्रियप्रवास', 'सिद्धार्थ' आदि जो भी महाकाव्य के नाम पर रचनाएँ उपलब्ध हैं। उनमें बीती हुई बातों को नवीन रूप में रखा गया है लेकिन 'कामायनी' ही एक ऐसा काव्य है जो विश्व साहित्य में बेजोड़ है। हिंदी अथवा भारतीय साहित्य की बात तो दूर रही संसार की अन्य भाषाओँ में भी ऐसी रचनाएँ युगों बाद लिखी जाती है। कामायनी की कथा के लिए कवि ने ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण, छान्दोग्य उपनिषद आदि से सामग्री ली है। कामायनी १५ सर्गों का महाकाव्य है – चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य, आनंद।

कामायनी की मूल कथा अत्यंत संक्षिप्त है। किन्तु प्रसाद ने रूपक तत्व के द्वारा उसे अत्यंत विस्तृत स्वरुप दिया है। इसमें वैवस्वत मनु की जीवन कथा के माध्यम से मानवता के विकास की कथा कही गयी है। 'कामायनी' देश, काल और जाति की सीमा लाँघ गयी है।उसने मानव और मानवता को ही अपना लक्ष्य बना लिया है। इस महाकाव्य के नामकरण के सम्बन्ध में आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने लिखा है – "कामायनी या श्रद्धा का चरित्र अपनी आदर्शात्मक विशेषता के कारण काव्य का सर्वप्रमुख चरित्र है। कामायनीको नायिका प्रधान काव्य कहा जा सकता है।" (1) कामायनी की कथावस्तु "विलास प्रधान देव संस्कृति के विनाश से लेकर पूर्ण आनंद प्राप्त मानव संस्कृति के संस्थापन की कहानी है।" (2) दूसरे शब्दों में विलास प्रधान देवसंस्कृति के स्थान पर आनंद–प्रधान और लोक–कल्याणमयी मानव संस्कृति की स्थापना का चित्र इसमें है। 'कामायनी' की कथावस्तु में आदि, मध्य और अंत का चित्रण कवि ने अपनी लेखनी द्वारा अत्यंत कुशलता से किया है। कथा का आरम्भ जल–प्लावन की घटना का विशाल चित्र अंकित करने के साथ हुआ।प्रलय के पश्चात जलातिरेक घटने पर कथानक नायक मनु की चिंता इसमें प्रधान है। इसके उपरांत मनु का श्रद्धा से मिलन तथा उसका त्याग करने की कथा का आरंभिक चरण है। कथानक के मध्य भाग में मनु का इड़ा से मिलन और सारस्वत वासियों के विद्रोह कर देने पर मनु के आहत होने का चित्रण है। कथानक के अंतिम चरण में मनु को शिव के विराट रूप का दर्शन तथा श्रद्धा द्वारा मनु को इच्छा, ज्ञान और क्रिया के त्रिकोण को समझाकर मनु को आनंदलोक में पहुँचने का वर्णन है। उस लोक में जड़ और चेतन मिलकर एक हो जाते हैं, औरसर्वत्र आनंद का ही प्रकाश छा जाता है। इसमें सामाजिक प्रयोगों के दर्शन तो होते हैं, पर उस तत्व ज्ञान की भी एक झलक मिलती है जिसको लेकर मानव की आनंद साधना चल सकती है। कामायनी की कथा एक ओर एक ऐतिहासिक प्रयत्न की कथा है तो वहीँ दूसरी ओर वह सम्पूर्ण मानवता के चिरंतन द्वंद्व की भी कथा है। इसकथा के मूल में जिस रूपक का आभास मिलता है। उसकी एकश्रेष्ठ दार्शनिक पृष्ठभूमि है, और उसके कारण कामायनी को सम्पूर्ण मानवता के काव्य का गौरव प्राप्त हुआ है।

इस महाकाव्य में कवि ने दार्शनिक पृष्ठभूमि को अपने काव्य का आधार बनाकर शैव तत्व पर आनंदवाद की प्रतिष्ठा की है। सुख–दुःख की विभेद और विषमता भरी राह में आनंद–पूर्वक समरस होकर चलना ही शैव तत्व का मूल ध्येय है। समरसता का अर्थ है द्वयता का अभाव अर्थात दो का मिलकर एक हो जाना समरसता है। समरसता शब्द मूलतः प्रत्यभिज्ञा दर्शन से सम्बन्ध रखता है। प्रसाद ने समरसता की एकमात्र सुत्रधारिणी श्रद्धा को बताया है क्योंकि अनियंत्रित बुद्धि संघर्ष की ओर लेजाती है और श्रद्धा के सहारे ही मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। यही कामायनी का स्वरुप है। कामायनी में हृदय और बुद्धि का समन्वय, इच्छा, क्रिया और ज्ञान का समन्वय, सुख–दुःख का समन्वय, नर–नारी का समन्वय, अधिकार और अधिकारी का समन्वय का ही वर्णन है। सुख और दुःख के मध्य समरसता की स्थापना निराश मनु के मन में श्रद्धा द्वारा की गयी है –

"नित्य समरसता का अधिकार
उमड़ता कारण जलधि सामान
व्यथा में नीली लहरों बीच
बिखरते सुख मणिगण द्युतिमान।"[3]

इसमें तप और भोग की समरसता पर बल दिया गया है। देव जाति के विनाश को देखकर मनु भोग से विरक्त होकर तप को ही सत्य मानते हैं। श्रद्धा उनके भ्रम का निवारण करती है–

"तप नहीं केवल जीवन सत्य
करुण यह क्षणिक हीन अवसाद
तरल आकांक्षा से है भरा
सो रहा आशा का आहलाद।"[4]

इसमें शक्ति के बिखरे हुए कणों से मानवता के विजय की बात कही है–

"शक्ति के विद्युतकरण जो व्यस्त,
विकल बिखरे हैं, जो निरुपाय
समन्वय उसका करे समस्त
विजयिनी मानवता हो जाय।" [5]

नर–नारी, शासक–शासित के मध्य भी समरसता आवश्यक मानी गयी है। विवाह के पश्चात मनु इस समरसता के सिद्धांत को भूल जाते हैं, और उन्हें अशांत होकर भटकना पड़ता है। काम उन्हें उनकी इस भूल से अवगत कराते हैं–

"तुम भूल गए पुरुषत्व के मोह में कुछ सत्ता है नारी की
स्मरसता है सम्बन्ध बनी अधिकार और अधिकारी की।"[6]

समरसता के अभाव का परिणाम द्वयताकी सृष्टि है। यह बुद्धिवाद के कारण होता है। प्रसाद ने कोरे बुद्धिवाद का विरोध करते हुए बुद्धि, श्रद्धा और कर्म की समरसता का उल्लेख किया है–

"यह तर्कमयी तू श्रद्धामय, तू मननशील कर कर्म अभय
इसका तू सब संताप निश्चय हर ले हो मानव भाग्य उदय
सबकी समरसता कर प्रचार मेरे सुत सुन माँ की पुकार।"[7]

हृदय और बुद्धि के समन्वय में कवि ने लोकमंगल की भावना देखी है। मनु जब तक इड़ा के प्रभाव में रहे दुखी रहे किन्तु श्रद्धा के सामीप्य ने ही उन्हें यथार्थ और अखंड आनंद प्रदान किया। कामायनी में जीवन का सबसे बड़ा वैषम्य इच्छा, क्रिया और ज्ञान का समन्वय है। इन तीनों शक्तियों के एक दूसरे से पृथक रहने के कारण जीवन विडंबनाओं से भर जाता है–

"ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है
इच्छाक्यों पूरी हो मन की
एक दुसरे से न मिल सके
यह विडंबना है जीवन की।"[8]

प्रसाद ने श्रद्धा द्वारा इन शक्तियों का समन्वय कराकर दार्शनिक जगत में अपने स्वतंत्र चिंतन का परिचय दिया है–

"महाज्योति रेखा सी बनकर
श्रद्धा की स्मृति दौड़ी उनमें
वेसंबद्ध हुए फिर सहसा
जाग उठी थी ज्वाला जिनमें।"[9]

इन तीनों में सामंजस्य स्थापित होते ही एक दिव्य स्वर लहर परिव्याप्त हो उठती है–

"स्वप्नस्वाप जागरण भस्म हो
इच्छा, क्रिया, ज्ञान मिल लय थे,
दिव्य अनाहत पर निनाद में
श्रद्धायुत मनु बस तन्मय थे।"[10]

शैव दर्शन में परम शिव के स्वरुप को सदैव समरस बताया गया है। शिव के अस्तित्व में पाप–पुण्य सामान रूप से पावन बन जाते हैं–

"यह क्या श्रद्धे!बस तू ले चल
उन चरणों तक, दे निज संबल
सब पाप पुण्य जिसमें जल जल
पावन बन जाते हैं निर्मल
मिटते असत्य से ज्ञान लेश
समरस अखंड आनंद वेश।" [11]

समरसता जीवन की वह समतल भूमि है जिस पर आनंद रूपी अमृत प्रवाहित होता है। समरसता साधन है और आनंद साध्य ज्ञान, इच्छा और कर्म का समन्वय स्थापित हो जाने पर अखंड आनंद का साम्राज्य स्थापित हो जाता है। जड़–चेतन का समन्वय स्थापित होता है –

"समरस थे जड़ या चेतन
सुन्दर साकार बना था
चेतनता एक विलसती
आनंद अखंड घना था।"[12]

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "कामायनी की कथा का कार्य है त्रिपुर का एकीकरण, जिसके उपरांत मनु को आनंद लोक की प्राप्ति होती है, अर्थात कथावस्तु के उद्देश्य की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार अप्रस्तुत कथा का कार्य है भाववृत्ति, कर्मवृत्ति और ज्ञानवृत्ति का समन्वय। इसके उपरांत ही मन की समरसता की स्थिति प्राप्त कर चिरानंद लीन हो जाता है और कथा का उद्देश्य पूर्ण हो जाता है।"[13] सबसे बड़ी बात यह है कि कामायनी का मनु कर्मशील है, और वह कर्म से आनंद की ओर बढ़ता है। जिससे काव्य में कर्म और चेतना का सन्देश प्रधान हो गया है। नारी की प्रतिष्ठा द्वारा कवि ने अपने काव्य के द्वारा अमर सन्देश दिया है। यह नारी प्रतिष्ठा प्रसाद जी को भारतीय संस्कृति से मिली है, जिसका प्रभाव उनके नाटकों में भी है। काव्य भी इससे श्रीसंयुक्त होकर निखर उठा है। कामायनी की वस्तु जितनी अनूठी है, उतना ही उसका कला पक्ष भी अनूठा है। भाषा के गंभीर्य और अभिव्यंजना की सांकेतिकता से उसमें एक नया सौन्दर्य आ गया है।

कामायनी में मानव जाति का ऐतिहासिक विकास और आध्यात्मिक भावना का समन्वय है। उसको चित्तवृत्तियों का महाकाव्य कहा गया है। सर्गों का विभाजन जिन वृत्तियों के नाम पर हुआ है उनके रूप को खड़ा करने में कवि ने कमाल कर दिया है। पूरी कामायनी में जीवन की आवश्यक वृत्तियों का क्रमिक विकास दिखाया गया है। इसमें कुल चार पात्र हैं मनु, श्रद्धा, इड़ा और मानव। इन चारों पात्रों को ही लेकर प्रसादने मानव जीवन के आतंरिक पहलु को अपने काव्य में अमर बना दिया है।

प्रसाद ने 'कामायनी' की सम्पूर्ण कथा की धुरी श्रद्धा को ही बनाया है "श्रद्धा का अर्थ है आस्तिक बुद्धि (भावना) आस्तिक बुद्धिः इति श्रद्धाः। आस्तिकता का अर्थ है अस्तित्व में सहज आस्था इस प्रकार आस्तिक भावना जीवन की एकांत मूलगत भावना है इसी के द्वारा जीवन का संचालन होता है। आस्तिक बुद्धि का पर्याय होने के कारण उसमें अस्तित्व की तीनों अभिव्यक्तियों –इच्छा, क्रिया, ज्ञान की स्थिति है।" [14] कामायनी में मनु का पहले श्रद्धा (भावना) और बाद में इड़ा (बुद्धि) से संपर्क कराके कवि ने उसे अंत में श्रद्धा द्वारा ही आनंद की प्रप्ति कराई है। इसका स्पष्ट अर्थ है की श्रद्धा इड़ा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में – "प्रसाद ने श्रद्धा को कोरी भावुकता के रूप में चित्रित नहीं किया है, वह वास्तव में जीवन की प्रेरणा का प्रतीक है। इसके विपरीत भावलोक कोरी भावुकता–इच्छा की रंगीन क्रीड़ाओं का प्रतीक है, और स्पष्ट शब्दों में, भावलोक केवल इच्छा का प्रतीक है तथा श्रद्धा जीवन के अस्तित्व में आस्था अर्थात विश्वासयुक्त जीवनेच्छा है – "[15]

"जिसे तुम समझे हो अभिशाप
जगत की ज्वालाओं का मूल,
ईश का वह रहस्य वरदान,
कभी मत जाओ इसको भूल।" [16]

प्रसाद जी ने 'कामायनी' में 'संघर्ष' सर्ग द्वारा वैज्ञानिक आविष्कारों के दुरुपयोग का चित्रण किया हैऔर श्रद्धा द्वारा तकली भी कतवाई है। यंत्रो की भीषणता और तकली की कोमलता में मानो वर्त्तमान जीवन की विभीषिका और गाँधीवादी समाधान की भी झलक है। श्रद्धा पशु हत्या की निंदा करती है और बलि पर रुष्ट होती है, यह भी, मानो गांधीवाद का ही प्रभाव है। प्रसाद ने युग की समस्याओं को अपने काव्य का विषय बनाकर प्रगतिशीलता का परिचय दिया है।

कामायनी की धारणा बड़ी ऊँची है और उसकी कथा का विधान भी कठिन है, लेकिन यदि हम उसकी कथा की गहराई को समझने का प्रयास करें तो हम प्रसाद की आत्मा कोभी अवश्य समझ लेंगे। 'कामायनी' में प्रसाद जी ने नारी को श्रद्धा के रूप में प्रतिष्ठित कर पुरुष को भटकाया है और अंत में उसी को समर्पण करा

कर उसकी श्रेष्ठता सिद्ध की है। इसी तत्व को ग्रहण करने और बुद्धि और ह्रदय के सामंजस्य द्वारा मानव जीवन के रहस्य को समझने के बाद जीवन में आनंद के लिए और किसी साधन की आवश्यकता नहीं रहती। यह मूल भावना कामायनी की आध्यात्मिक प्रेरणा से भी ऊपर है और यही उसके कवि की विजय है, अन्यथा वह रससिक्त कवि न होकर शुद्ध दार्शनिक हो जाता।

इस अखंड आनंदानुभूति में द्वयता के लिए स्थान नहीं है। दुःख और सुख तथा जड़ और चेतन के द्वैतभाव इसमें तिरोहित हो जाते हैं।

"सब भेद–भाव भुलाकर
दुःख–सुख को दृश्य बनाता
'मानव कहाँ रे "यह मैं हूँ"
यह विश्व नीड़ बन जाता।" [17]

यही समरसता की पराकाष्ठा है।डॉ. रामलाल सिंह ने कामायनी के रस आनंदवाद के सम्बन्ध में लिखा है "कामायनी का आनंदवाद आत्मवाद की स्थिति पर खड़ा है।"[18] आत्मवाद का पहला सिद्धांत "सोहम" अर्थात"मैं वही हूँ" है। जब व्यक्ति में यह भावना जागृत हो जाती है कि यह संसार मेरा हैऔर मैं संसार का हूँ तब वह पूर्णतः आनंदमय हो जाता है। कामायनी के दर्शन के सम्बन्ध में डॉ. वेदज्ञ आर्य ने लिखा है "इस प्रकार सर्वत्र आनंद की व्यापक सत्ता को प्रतिष्ठित करके उसकी उपलब्धी के लिए लोगों को प्रेरित करना ही कामायनीकार का चरम लक्ष्य है। प्रसाद ने बुद्धि के अतिरेक का विरोध किया है। कामायनी का आनंदवाद जीवन से भागने की बात नहीं कहता, वह जीवन के नाना विघ्नों से बार–बार प्रताड़ित होने पर भी उत्तरदायित्व का बोझ सँभालते हुए आनंदित रहने का सन्देश देता है। अखंड आनंद की प्राप्ति श्रद्धामूलक आनंदवाद से ही हो सकती है।"[19]

कामायनी की एक और बड़ी विशेषता है उसका प्रकृति वर्णन। प्रकृति से प्रेम प्रसाद के मानवतावादी जीवन दर्शन का एक प्रमुख तत्व है जो जीवन को सौंदर्य और मधुरिमा से युक्त करता है। प्रकृति वर्णन के माध्यम से प्रसाद सम्पूर्ण मानव जाति को यह सन्देश देना चाहते हैं कि आधुनिक युग में प्रकृति पर विजय के भौतिक दम्भ का वही नतीजा होगा जो देव सभ्यता का हुआ। प्रकृति से प्रेम का, राग का रिश्ता स्थापित करने के उद्देश्य से प्रसाद कहते हैं–

"प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित हम सब थे भूले मद में
भोले थे हाँ तिरते केवल सब विलासिता के नद में" [20]

सामंती सभ्यता के पूँजीवादी विकास से मनु केवल सुख को ही ग्रहण करते हैं और पाश्चात्य सभ्यता की व्यक्तिवादी स्वाधीनता चाहते हैं। वे कहते हैं –

"आकर्षण से बना विश्व यह केवल भोग्य हमारा,
जीवन के दोनों कुलों में बहे वासना हमारा।" [21]

मनु में वर्तमान सभ्यता के उपभोक्तावादी लक्षण भी दिखलाई पड़ते हैं। मनु के भोगवादी या सुखवादी विचारों का कोई सम्बन्ध न तो संस्कृति से था और न ही मानव कल्याण से।प्रसाद ने अपनी दूरदर्शी दृष्टि से बींसवीं शताब्दी के चरम उपभोक्तावादी और बर्बरतावादी परिस्थितियों को देखा, अनुभव किया और कामायनी में उसे मूर्त रूप दिया। "कामायनी का मूल दर्शन मानव सभ्यता के उपभोक्तावादी और बर्बरतावाद विकास के टकराहट का दर्शन है। यह निराशा की बेला में भी "मानवता विजयिनी हो जाय" की कामना का दर्शन है।" [18]

'आँसू' जैसा आत्मपरक और कामायनी जैसा विश्व–परक काव्य प्रसाद की मानसिक पृष्ठभूमि की उच्चता को ही व्यक्त करता है। कहीं–कहीं यह ऊँचाई ही परोक्ष सत्ता के प्रति कवि के प्रेम और जिज्ञासा को प्रकट करती है। जिसे रहस्यवाद भी कह सकते हैं। हम तो कवि को एकमात्र मानवीय जीवन का कवि मानते हैं, और छायावाद में इसी कवि ने जीवन की ऐसी सर्वांगपूर्ण व्याख्या 'कामायनी' द्वारा की है, जो भारतीयता के साथ विश्व–जनीनता की भी द्योतक है। कवि प्रसाद हिंदी के गौरव हैं और आधुनिक कवियों में उनका स्थान सर्वश्रेष्ठ है।

कवि का जीवन सन्देश है – मनु कहता है–

"यह क्या श्रद्धे! बस तू ले चल
उन चरणों तक, देनिजसंबल
सब पाप–पुण्य जिसमें जल–जल
पावन बन जाते हैं निर्मल
मिटते असत्य से ज्ञान लेश
समरस अखंड आनंद वेश।" [22]

अध्ययन का उद्देश्य

श्रद्धा द्वारा बुद्धि का नियंत्रण एवं बुद्धि के सदुपयोग द्वारा ही इस जीवन एवं जगत में अभिष्ट आनंद की प्राप्ति हो सकती है।

निष्कर्ष

कामायनी महाकाव्य जीवन की निराशा, भय–त्रस्त, भ्रमित एवं ''चिर दग्ध दुःखी वसुधा'' को सुख और शान्ति की आशा बांधता हुआ अखण्ड आनंद प्राप्ति का मंगलमय जीवन संदेश दे रहा है।

अंत टिप्पणी

1. *छायावाद दर्पण – शुभदावांजपे, पृष्ठ – 89 नेशनल पब्लिशर्स, सिकंदराबाद, प्रथम संस्करण – 2011*
2. *छायावाद दर्पण – शुभदावांजपे, पृष्ठ – 89 नेशनल पब्लिशर्स, सिकंदराबाद, प्रथम संस्करण – 2011*
3. *कामायनी – जयशंकर प्रसाद, सर्ग – श्रद्धा, पृष्ठ – 59 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
4. *कामायनी – जयशंकर प्रसाद, सर्ग – श्रद्धा, पृष्ठ – 60 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
5. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद, सर्ग – श्रद्धा, पृष्ठ – 59 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
6. *कामायनी – जयशंकर प्रसाद, सर्ग – इड़ा, पृष्ठ – 148 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
7. *कामायनी – जयशंकर प्रसाद, सर्ग – दर्शन, पृष्ठ – 226 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
8. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद,सर्ग –रहस्य,पृष्ठ –250 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद1971*
9. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद,सर्ग –रहस्य,पृष्ठ– 250*
10. *लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद1971*
11. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद, सर्ग–रहस्य,पृष्ठ –251 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
12. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद, सर्ग–दर्शन,पृष्ठ –233 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद1971*

13. *कामायनी–जयशंकर प्रसाद, सर्ग–आनंद,पृष्ठ – 270 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद1971*
14. *कामायनी का पुनर्पाठ– डॉ. नगेन्द्र, सं. परमानन्द श्रीवास्तव, पृष्ठ –66 अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद 2010 कामायनी का पुनर्पाठ–डॉ. नगेन्द्र,सं. परमानन्द श्रीवास्तव, पृष्ठ – 65*
15. *अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद 2010 कामायनी का पुनर्पाठ– डॉ. नगेन्द्र, सं. परमानन्द श्रीवास्तव, पृष्ठ – 66 अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद 2010*
16. *कामायनी–जयशंकर प्रसाद, सर्ग – श्रद्धा, पृष्ठ –58 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
17. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद, सर्ग–आनंद,पृष्ठ –266 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
18. *छायावाद दर्पण – शुभदावांजपे, पृष्ठ – 120*
19. *नेशनल पब्लिशर्स, सिकंदराबाद, प्रथम संस्करण –2011 छायावाद दर्पण – शुभदावांजपे, पृष्ठ–120*
20. *नेशनल पब्लिशर्स, सिकंदराबाद, प्रथम संस्करण –2011 कामायनी–जयशंकर प्रसाद, सर्ग–चिंता, पृष्ठ – 19 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
21. *कामायनी –जयशंकर प्रसाद, सर्ग –कर्म, पृष्ठ –125 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*
22. *कामायनी–जयशंकर प्रसाद, सर्ग–दर्शन, पृष्ठ –233 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1971*